Dhwani Kavya Ka Nirupan

MA – II Sem

- Dr. UMA SHARMA

(H.O.D, Sanskrit Department)

ॐ नमः शिवाय
भगवत्यै सरस्वत्यै नमः

एम.ए. II Semester
प्रश्नपत्र - काव्यशास्त्र
व्याख्यात्री - डॉ. उमा शर्मा

विषय : ध्वनि-काव्य का निरूपण

ध्वनिवादी आचार्य आनन्दवर्धन का अनुसरण करते हुए आचार्य मम्मट ने काव्य के तीन भेद माने हैं—

(क) उत्तम काव्य (ध्वनि काव्य)
(ख) मध्यम काव्य
(ग) अधम काव्य (चित्रकाव्य)

वस्तुतः ध्वनि के स्वरूप का विशद विवेचन प्रथमतः आ० आनन्दवर्धन ने ही प्रस्तुत किया है—

यत्रार्थः शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनीकृतस्वार्थौ।
व्यङ्क्तः काव्यविशेषः स ध्वनिरिति सूरिभिः कथितः॥
(ध्वन्यालोक, 1/13)

अर्थात् जहाँ शब्द और अर्थ अपने वाच्यार्थ को गौण बनाकर उस व्यङ्ग्य रूप विशेष अर्थ को व्यक्त करते हैं, उस काव्य विशेष को काव्य-कोविदों ने ध्वनि कहा है।

अभिनव गुप्त ने ध्वनि पद के पाँच अर्थ निरूपित किए हैं—

1. (ध्वनति यः सः इति व्यञ्जकः शब्दः ध्वनिः) - इस व्युत्पत्ति के अनुसार व्यञ्जक शब्द को ध्वनि कहते हैं,
2. ध्वनति ध्वनयति वा इति ध्वनिः - अर्थात् व्यञ्जक अर्थ को ध्वनि कहते हैं।
3. ध्वन्यते इति ध्वनिः - इस व्युत्पत्ति के अनुसार व्यङ्ग्य रस अलंकार एवं वस्तु को ध्वनि कहते हैं,

4. ध्वन्यते अनेन इति ध्वनिः = इस व्युत्पत्ति के अनुसार व्यञ्जना-व्यापार को ध्वनि कहते हैं।

5. ध्वन्यतेऽस्मिन्निति ध्वनिः = इस व्युत्पत्ति के अनुसार पूर्वोक्त ध्वनि-चतुष्टययुक्त काव्य को ध्वनि कहते हैं।

ध्वनिवादी आचार्य मम्मट के अनुवर्तन पर आ० मम्मट ने व्यङ्ग्य-प्रधान उत्तम काव्य को "ध्वनि काव्य कहा है। आ० मम्मट ने उत्तम काव्य अर्थात् ध्वनि काव्य को इस प्रकार परिभाषित किया है—

"इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधैः कथितः"

अर्थात् जहाँ वाच्यार्थ की अपेक्षा व्यङ्ग्यार्थ में अधिक चमत्कार पाया जाये, उसे विद्वानों ने ध्वनि-काव्य की संज्ञा प्रदान की है। आ० आनन्दवर्धन ने ध्वनि को काव्य की आत्मा कहा है—

"काव्यस्यात्मा ध्वनिः" ध्वन्यालोक, 1/1

उक्त मान्यता को आ० मम्मट ने ऐसी स्थिरता प्रदान की, कि वह आज भी अविकल रूप से काव्य में प्रकट हो रही है। मम्मट ने सर्वप्रथम ध्वनि के दो भेद किए हैं—

1- लक्षणामूलक ध्वनि 2- अभिधामूलक ध्वनि

लक्षणामूलक (अविवक्षित वाच्य) ध्वनि

लक्षणामूलक ध्वनि: लक्षणा के आश्रित होती है। इसको ही अविवक्षित वाच्य ध्वनि भी कहते हैं। इसमें वाच्यार्थ की विवक्षा नहीं रहती, अर्थात् वाच्यार्थ बाधित रहता है। उसके द्वारा व्यङ्ग्यार्थ की प्रतीति नहीं होती। इसमें व्यङ्ग्यार्थ लक्षणा पर आधारित रहता है। अतः लक्ष्यार्थ की प्रतीति के पश्चात् ही व्यङ्ग्यार्थ की प्रतीति होती है।

आ० मम्मट ने—

अविवक्षितवाच्यो यत्तत्र वाच्यं भवेद् ध्वनौ।
अर्थान्तरे संक्रमितमत्यन्तं वा तिरस्कृतम्" उक्त

रूपेण कहकर अविवक्षित वाच्य अर्थात् लक्षणामूलक ध्वनि के दो भेद किए हैं—

(क) अर्थान्तरसंक्रमित वाच्य ध्वनि
(ख) अत्यन्त तिरस्कृत वाच्यध्वनि

(क) अर्थान्तर का तात्पर्य है - दूसरे अर्थ में। संक्रमित का अर्थ है - संक्रान्त होना। अर्थात् प्रविष्ट हो जाना। अभिप्रायतः शब्द अपने वाच्यार्थ को छोड़कर दूसरे अर्थ में बदल जाता है। तात्पर्य यह है कि जहाँ वाच्यार्थ की सीधी संगति नहीं बनती, वहाँ शब्द अपने सामान्य अर्थ को छोड़कर अपने से सम्बन्धित किसी विशिष्ट अर्थ का बोध कराता है, वहाँ अर्थान्तरसंक्रमित वाच्यध्वनि होती है—

उदाहरणार्थ-

त्वामस्मि वच्मि विदुषां समवायोऽत्र तिष्ठति ।
आत्मीयां मतिमास्थाय स्थितिमत्र विधेहि तत् ॥

अर्थात् मैं तुमसे कहता हूँ कि यहाँ पर विद्वानों का समुदाय उपस्थित है। इसलिए तुम अपनी बुद्धि को स्थिर करके सावधानी से व्यवहार करो।

सङ्गति - यहाँ विद्वानों की सभा में जाते हुए किसी शुभचिन्तक गुरु का शिष्य के प्रति कथन है। प्रस्तुत पद्य 'त्वामस्मि वच्मि' का मैं तुमसे कहता हूँ' यह वाक्य का वाच्यार्थ है, जो बाधित हो जाता है। यहाँ त्वाम् का लक्ष्यार्थ है- विशेष कृपा-पात्र तुमको। 'अस्मि' का लक्ष्यार्थ है- मैं तुम्हारा विशेष हितचिन्तक हूँ। और 'वच्मि' का लक्ष्यार्थ है= उपदेश देता हूँ। इसी प्रकार 'विदुषाम्' और आत्मीयाम् अन्यार्थ में परिणत होकर- 'अन्यथा आचरण करने पर उपहास होगा' इस अर्थ की प्रतीति कराते हैं।

इस प्रकार इस श्लोक के त्वाम्, अस्मि एवं वच्मि पद अपने वाच्यार्थ के अनुपयुक्त होने से अर्थान्तर में संक्रमित हो गये हैं। शिष्य की हितसाधनता व्यङ्ग्य है। इस प्रकार यह लक्षणामूलक ध्वनि के भेद अर्थान्तरसंक्रमित वाच्यध्वनि का उदाहरण है।

अत्यन्ततिरस्कृत वाच्य ध्वनि - जहाँ शब्द अपने वाच्यार्थ का पूर्णरूपेण तिरस्कार (परित्याग) करके अपने से बिलकुल विपरीत अर्थ में परिणत हो जाते हैं, वहाँ अत्यन्त तिरस्कृत वाच्यध्वनि होती है। उदाहरणार्थ-

"उपकृतं बहु तत्र किमुच्यते सुजनता प्रथिता भवता पुरा।
विदधदीदृशमेव सदा सखे सुखितमास्व ततः शरदां शतम्॥"

(यहाँ कोई अपकृत व्यक्ति अपकार करने वाले से कह रहा है) आपने बड़ा उपकार किया है, आपकी सज्जनता की कहाँ तक प्रशंसा की जाये। हे मित्र सदा ऐसा ही करते हुए (विदधत्) तुम सैकड़ों वर्षों तक सुखी होकर इस संसार में रहो (आस्व)।

संगति - यहाँ अपकार करने वाले के प्रति उपकार, सुजनता आदि शब्दों के मुख्यार्थ की सङ्गति नहीं लग सकती। इसीलिए लक्षणा द्वारा इन शब्दों का अर्थ बिलकुल तिरस्कृत होकर विपरीत अर्थ को प्रकट कर रहा है। इस प्रकार मुख्यार्थ का अत्यन्त तिरस्कार करके 'उपकृतम्' 'सुजनता', 'सखे' तथा 'सुखितम्' आदि शब्द 'अपकृतम्' 'दुर्जनता', 'शत्रु' तथा 'दुःखितम्' के बोधक बन जाते हैं। तुम्हारे जैसा अपकारी इस संसार को जितनी जल्दी छोड़ दे उतना ही अच्छा है; यह व्यङ्ग्य है।

धन्यवाद